मजदूरों का अपना कोई देश नहीं होता । दुनियां के मजदूरो, एक हो !

फरीदाबाद मजदूर समाचार

मजदूरों की मुक्ति खुद मजदूरों का काम है । दुनियां को बदलने के लिए मजदूरों को खुद को बदलना होगा ।

RN 42233 पोस्टल रजिस्ट्रेशन L/HR/FBD/73

नई सीरीज नम्बर 25 | जुलाई 1990 | 50 पैसे

पूंजीवादी शब्दजाल

भारत में पूंजी के नुमाइन्दे शब्दों के खेल में एक्सपर्ट हैं । अंग्रेजी का शासक तबके के ऊपरी हिस्से की काम-काज की भाषा होना इस खेल में उनके बड़े काम की चीज है । फरीदाबाद में मजदूरों के खिलाफ पूंजी के नुमाइन्दों द्वारा अपने शब्दजाल के इस्तेमाल के दो उदाहरण हाल ही में हमारे सामने आये हैं ।

ईस्ट इन्डिया कॉटन में उभरते मजदूर विरोध को कुचलने के लिये वहां की मैनेजमेंट ने दिसम्बर 89 में **पावरलूम** में मजदूरों के एक सामुहिक कदम के खिलाफ एक्शन ले कर कुछ मजदूरों को सस्पैन्ड किया था । छह महीने तक घरेलू जाँच के नाटक के बाद मैनेजमेन्ट ने सस्पैन्ड वर्करों के साथ नरमी बरती है—मैनेजमेन्ट कहती है कि वह निलम्बित मजदूरों को डिसमिस कर सकती थी पर वह नरमी बरतते हुये उन मजदूरों को डिसचार्ज कर रही है । ईस्ट इन्डिया की पावरलूम के सस्पैन्ड मजदूरों को इस प्रकार मैनेजमेन्ट ने नौकरी से निकाल दिया है । वैसे, डिसमिस और डिसचार्ज के महीन भेद समझाने के लिये पूंजीवादी विद्वान आपको तत्पर मिलेंगे पर अगर आपको आधिकारिक फैसला चाहिये तो इन्तजार कीजिये सुप्रीम कोर्ट के फैसले का जहाँ पर लेबर कोर्ट से हाई कोर्ट होते हुये पहुचा एक केस डिसमिस बनाम डिसचार्ज पर फैसले का इन्तजार कर रहा है ।

डिसमिस-डिसचार्ज से भी महीन भेद वाले शब्द **एस्कोर्ट्स** मैनेजमेन्ट इस्तेमाल कर रही है । **एस्कोर्ट्स में मजदूर अब ओवरटाइम काम नहीं करते बल्कि ड्यूटी के बाद वर्कर ओवरस्टे करते हैं ।** एस्कोर्ट्स मैनेजमेंट के ओवरटाइम और ओवरस्टे शब्दों में बेहद महीन भेद दिखाना किसी अफलातून पर छोड़िये, एस्कोर्ट्स मजदूरों के लिये तो इन शब्दों में इतना फर्क है कि इनके बीच से हाथी गुजर सकता है—ओवर टाइम के लिये डबल रेट से पेमेन्ट होती थी जब कि ओवरस्टे के लिये सिंगल रेट से पैसे दिए जाते हैं। दरअसल ओवरटाइम के लिए डबल रेट से भुगतान का पूंजीवादी कानून काफी पुराना है । इस पूंजीवादी कानून को फरीदाबाद की अधिकतर मैनेजमेन्टें निर्लज्जता से तोड़ती हैं——आमतौर पर आठ घन्टे ओवरटाइम को रजिस्टर में चार घन्टे चढ़ा कर चार घन्टे के लिये डबल रेट से पेमेन्ट करके इस पूंजीवादी कानून की भरपाई कर दी जाती है । पर एस्कोर्ट्स एक जानी-मानी कम्पनी है और उसमें मिडिल मैनेजमेन्ट स्तर के इतने लोग हैं कि टॉप मैनेजमेन्ट को ऐसी खुली धोखाधड़ी अब रास नहीं आती । फिर भी एस्कोर्ट्स में ओवरटाइम काम करवाना है और पैसे भी मजदूरों को कम ही देने हैं—क्या करे ? मैनेजमेन्ट में बड़ी-बड़ी डिग्री लिए बैठे साहब लोगों ने राह निकाली——यूनियन के साथ मैनेजमेन्ट ने एग्रीमेन्ट की है कि एस्कोर्ट्स में ओवरटाइम काम नहीं होगा, ड्यूटी समाप्त हो जाने के बाद जिन मजदूरों को काम के लिए रोका जायेगा वे ओवरस्टे कर रहे होंगे और इसके लिये उन्हें सामान्य काम की तरह सिंगल रेट से पेमेन्ट की जायेगी । पर हाँ, ऐसी एग्रीमेन्ट चूंकि खुलेआम पूंजीवादी कानून के खिलाफ है इसलिए यह बिचौलियों और आकाओं के बीच जबानी जमा-खर्च मात्र है । एस्कोर्ट्स के जो भी मजदूर इस पूंजीवादी शब्दजाल को लेबर डिपार्टमेन्ट में चैलेन्ज करें वे यह समझ कर करें कि उन्हें लेबर डिपार्टमेन्ट के मन्थली ले कर कुम्भकरणी नींद का स्वाँग कर रहे लोगों को जगाने के प्रयास करने होंगे ।

मजदूरों को पूंजी के नुमाइन्दों की नींद में खलल डालने के प्रयास अवश्य करने चाहियें पर यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि पूंजीवादी व्यवस्था में दरअसल चित्त भी और पट भी पूंजी के नुमाइन्दों की होती है । यह इसीलिए है कि मजदूरों की राह क्रान्ति की राह है ।

—o—

सरकारी नौकरी

यहाँ वर्कशापों/दुकानों पर काम करने वाले मजदूर फैक्ट्री की नौकरी के लिये ललचाते हैं । प्रायवेट लिमिटेड कारखानों के मजदूर लिमिटेड कनसर्न में काम के लिए ललायित रहते हैं । और सब मजदूर परमानेन्ट सरकारी नौकरी के लिए बेताब रहते हैं । खराब वर्किंग कन्डीशनों और अन्य परेशानियों से जूझते सरकारी उद्यमों के वर्कर भी मन ही मन नौकरी के पक्की होने और रिटायरमैन्ट पर मिलने वाले पैसे का हिसाब लगा कर सन्तुष्ट होने की कोशिश करते हैं । यह सही है कि वर्कशाप के वर्कर से लिमिटेड कम्पनी का वर्कर बेहतर पोजीशन में है पर कुल मिलाकर देखें तो पतनशील पूंजीवादी व्यवस्था के गहराते संकट के इस दौर में किसी भी मजदूर द्वारा इस व्यवस्था में सन्तुष्ट होने की कोशिश भ्रम पालने से अधिक कुछ नहीं है । अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए यहां हम सरकारी नौकरी की डगमग हकीकत की एक झलक दिखाने की कोशिश करेंगे ।

आइये पहले कुछ उदाहरण लें ।

अमरीकी-मोडल वाले देश ब्राजील के राष्ट्रपति ने 11 जून 90 को तीन लाख साठ हजार सरकारी वर्करों की छटनी लिस्ट जारी करने की प्रतिज्ञा की थी । सरकार द्वारा उठाये जाने वाले इस कदम के खिलाफ ब्राजील में 11 जून से बीस लाख मजदूरों ने हड़ताल शुरू कर दी । हड़ताल के जोर पकड़ते जाने के साथ ब्राजील के राष्ट्रपति की प्रतिज्ञा ढीली पड़ती गई । 16 जून को जा कर राष्ट्रपति ने 75 हजार सरकारी वर्करों की छटनी लिस्ट जारी की और बाकी को आहिस्ता-आहिस्ता करके पाँच साल में काम से निकालने का इशारा किया । इस पर बिचौलिए सक्रिय हो गये हैं पर मजदूरों की हड़ताल के फैलने और तीखा होने के आसार हैं । और ब्राजील के हिसाब से इतने बड़े पैमाने पर सरकारी कर्मचारियों की छटनी का कारण कर्मचारियों की कोई गलती नहीं है——ब्राजील का राष्ट्रपति तो तीन लाख साठ हजार सरकारी नौकरियाँ इसलिये खत्म करना चाहता है ताकि सरकारी खर्च में कुछ कटौती की जा सके । और सरकारी खर्च में कटौती जरूरी है ताकि ब्राजील की लड़खड़ाती अर्थव्यवस्था सम्भाली जा सके ।

लड़खड़ाती अर्थव्यवस्था को सम्भालने के लिए ही इंग्लैंड की प्रधानमन्त्री थैचर ने ढोल-नगाड़ों के साथ सरकारी संस्थाओं का थोक में प्रायवेटकरण किया——प्रायवेटकरण की आड़ में इंग्लैंड में बड़े पैमाने पर सरकारी वर्करों की छंटनी की । लेकिन ऐसा करने के बावजूद इंग्लैंड की अर्थव्यवस्था अब फिर लड़खड़ाने लगी है । इससे थैचर का प्रधानमन्त्री पद खतरे में पड़ गया है——नई तीन-पाँच के लिए पूंजी का ब्रिटिश धड़ा नये जादुगर नेता की तलाश में है ।

पूर्वी यूरोप के देशों में दिवालिएपन के कगार पर खड़ी अर्थव्यवस्थाओं को बचाने की कोशिश में नकली कम्युनिस्टों ने अपने नकाब तक उतार फेंके हैं । पोलैंड-हंगेरी-रोमानिया आदि में पूंजीवादी एकतन्त्र की जगह पूंजीवादी जनतन्त्र की धमाचौकड़ी में छटनी किये गये सरकारी वर्कर लाखों बेरोजगारों के रूप में अचानक इन कुलटाओं के गर्भ से टपक पड़े हैं ।

इस दौर की बड़े पैमाने की और वह भी एकमुश्त सरकारी वर्करों की छंटनी करने की बाजी रूस सरकार जीतती लगती है । पूंजीवादी जनतन्त्र के डमरू की ताल पर तत्काल छंटनी किए जाने वाले बीस लाख सरकारी वर्करों के नरमुन्डों की माला डाल कर ताँडव के लिए उत्सुक गोर्बाचोव आधुनिक शिव के खिताब का प्रबल दावेदार है । बीस लाख सरकारी वर्करों की तत्काल छंटनी के लिए रूस सरकार भी ब्राजील-इंग्लैंड आदि

(शेष अगले पेज पर)

हमारे लक्ष्य हैं:— 1. मौजूदा व्यवस्था को बदलने के लिये इसे समझने की कोशिशें करना और प्राप्त समझ को ज्यादा से ज्यादा मजदूरों तक पहुचाने के प्रयास करना । 2. पूंजीवाद को दफनाने के लिए जरूरी दुनियां के मजदूरों की एकता के लिये काम करना और इसके लिये आवश्यक विश्व कम्युनिस्ट पार्टी बनाने के काम में हाथ बटाना । 3. भारत में मजदूरों का क्रान्तिकारी संगठन बनाने के लिये काम करना । 4. फरीदाबाद में मजदूर पक्ष को उभारने के लिये काम करना ।

समझ, संगठन और संघर्ष की राह पर मजदूर आन्दोलन को आगे बढ़ाने के इच्छुक लोगों को ताल-मेल के लिये हमारा खुला निमन्त्रण है । बातचीत के लिये बेझिझक मिलें । टीका टिप्पणी का स्वागत है—सब पत्रों के उत्तर देने के हम प्रयास करेंगे ।

संपर्क—मजदूर लाइब्रेरी, आटोपिन झुग्गी, बाटा चौक के पास, एन. आई. टी. फरीदाबाद—121001

(प्रथम पृष्ठ का शेष)

की सरकारों की तर्ज पर दलील दे रही है——रूस की अर्थव्यवस्था लड़खड़ा रही है, उसे बचाने के लिए बलि जरूरी है।

भारत में भी जब-तब कोई न कोई मन्त्री सरकारी खर्चे में कटौती की वकालत करता रहता है। सरकारी संस्थाओं के प्रायवेटकरण की आवश्यकता की सुगबुगाहट भी अब यहाँ होने लगी हैं। पर पूंजीवादी जनतन्त्र का नाटक इस समय यहाँ उस नाजुक स्थिति में है कि "लोकप्रिय" होने की मची होड़ में बड़े पैमाने पर सरकारी वर्करों की छटनी वाले "अलोकप्रिय" कदम के लिये कोई नेता-मन्त्री इस समय खुलकर सामने नहीं आ रहा। पर यह टेम्परेरी स्थिति है। पूंजीवादी जनतन्त्र के इस अजूबे में भी अर्थव्यवस्था का बढ़ता संकट विभिन्न किस्म की, खास करके हिन्दूवादी पूंजीवादी एकतन्त्रीय शक्तियों को मजबूत कर रहा है। लड़खड़ाती अर्थव्यवस्था को सम्भालने के लिए झटके का रूप और समय तय होने वाली बात ही बाकी बची है।

और बात ऐसी नहीं है कि सरकारी कर्मचारियों की नौकरी पर दुनियाँ में ऐसा संकट पहली बार आया हो। पीछे मुड़कर **1919** में जर्मनी आदि पर निगाह डालिये चाहे **1945** में जापान आदि पर, नजारा यही देखने को मिलेगा। पतनशील पूंजीवादी व्यवस्था के बड़े संकट के फलस्वरूप **1914** में छिड़े पूंजीवादी विश्वयुद्ध में ढाई करोड़ लोग मारे गये तो **1939** में छिड़े ऐसे ही युद्ध में पाँच करोड़ लोगों का कत्ल हुआ। और जो बच गए थे उनकी चमड़ी तक पूंजीवादी संकट की भेंट चढ़ी। **1919** में और फिर 1945 में भी थैले-भर नोटों के बदले मुट्ठी में सब्जी वाला फिल्मी गाना हकीकत था। लाखों की बचत और पेन्शन तब कौड़ियों में बदल दी गई थी— चैन से बुढ़ापा काटने की सोच रहे रिटायर हुए लोगों को दर-दर की ठोकर खानी पड़ी थी। मरने के लिये जिन्हें भरती किया गया था पर जो फिर भी बच गये थे उन्हें तथा युद्ध के दौरान दिन-रात जिन्हें काम करने को मजबूर किया गया था उन लाखों स्त्री-बच्चे-पुरुष मजदूरों को ठोकर मार कर बेरोजगारों के रूप में सड़कों पर धकेल दिया गया था। और इस पूंजीवादी अफरा-तफरी ने 1919 के बाद पूंजीवाद के हिटलरी जुनून को जन्म दिया था तो **1945** के बाद एटम बमों से लैस मानव जाति को नष्ट करने को तैयार पूंजीवादी गिरोहों को खड़ा किया है।

कहने का मतलब यह है कि पूंजीवादी व्यवस्था की पतनशीलता के इस दौर में इस व्यवस्था को बड़े संकट का जब भी झटका लगता है, सरकारी नौकरी और पेंशन आदि पानी का बुलबुला साबित होती हैं। दुनियां-भर में यह बार-बार देखने में आ रहा है कि सरकारें और उनके वादे ताश के पत्तों के महल हैं, जो कोई इन पर भरोसा करके चैन की नींद सोने की आशा करते हैं वे मूर्खों के लोक में विचरण करते हैं। 1938 में अपने रोजमर्रा के जीवन में मगन पीढ़ी को अहसास तक नहीं था कि पूंजीवादी व्यवस्था के संकट ने उसे मौत के कगार पर ला खड़ा किया है। **1939** से **1945** तक की पूंजीवादी मार-काट में कत्ल हुए पाँच करोड़ लोग सपने में तलवार भाँजते से अपनी मौत के मुंह में धकेल दिये गए थे।

आज हालात **1914** या 1938 से भी विकट हैं। ऐसे में अन्धी सामाजिक शक्तियों के हाथों सम्पूर्ण मानव जाति के विनाश की सम्भावना पर आंख मूंद लेना हमारी अपनी बरबादी को न्यौता देना है। पूंजीवाद के संकट के बढ़ते जाने के साथ उसमें सन्तुष्ट रहने के लिए तिनके ढूंढना बिल्ली को देख कर कबूतर द्वारा आंख बन्द कर लेने के समान है।

इसलिए आइये थोड़ा यह समझने की कोशिश करें कि अर्थव्यवस्था लड़खड़ा रही है का क्या मतलब है, देश को मजबूत करने का आज क्या अर्थ है। **पूंजीवाद में उत्पादन मानवों की जरूरत को ध्यान में रख कर नहीं किया जाता बल्कि मंडी में बिक्री के लिये प्रोडक्शन होता है। बुनियादी तौर पर आज उत्पादन देशों के आधार पर संगठित है और मार्केट है विश्व मन्डी। ऐसे में किसी देश की अर्थव्यवस्था कमजोर होने का मतलब यह है कि उस देश का प्रोडक्शन विश्व मन्डी में अन्य देशों के उत्पादन के मुकाबले टिक नहीं पा रहा। यानि, उस देश में पैदा किया गया सामान अन्य देशों की तुलना में महंगा है। और चूंकि अर्थव्यवस्था आज भी सामाजिक जीवन की धुरी है इसलिये ऐसे में किसी देश को मजबूत करने का पहला मतलब है उस देश में प्रोडक्शन की लागत को कम करना। लेकिन उत्पादन खर्च कम करने का अर्थ है कम मजदूरों से कम मजदूरी पर अधिक प्रोडक्शन लेना। इसलिये किसी देश को मजबूत करने का मतलब यह है कि उस देश के मजदूर कम तनखा लें और ज्यादा काम करें। देशभक्ति का मजदूरों के लिये मतलब यह है कि वे पूंजीवादी गुटों की होड़ में "अपने" पूंजीवादी गुट की वेदी पर अपना रक्त चढ़ायें।**

हर देश में पूंजीवादी शिक्षा और पुलिस-फौज वाले पूंजीवादी डन्डों से मजदूरों को बलिदान की दिशा में हाँक कर देश को मजबूत करने के प्रयास हो रहे हैं। पर होड़ चूंकि विश्व मन्डी के दायरे में है इसलिए हर देश द्वारा कम मजदूरों से कम तनखा पर ज्यादा काम लेने का नतीजा यह है कि दुनिया-भर में मजदूरों का जीवन स्तर गिरता जा रहा है और साथ ही साथ विश्व मन्डी में पूंजीवादी गुटों की होड़ और तेज हो रही है। पूंजीवादी व्यवस्था का संकट है कि बढ़ता ही जा रहा है।

असल में मंडी के लिये उत्पादन की जगह अब प्रोडक्शन को मानवों के उपयोग के लिये संगठित करना जरूरी हो गया है। इसके लिये विश्व मन्डी के स्थान पर विश्व मानव समुदाय की स्थापना आवश्यक हो गई है। कम्युनिस्ट क्रान्ति अब जरूरी हो गई है अन्यथा विश्व मन्डी की प्रतियोगिता के साथ चलती फौजी होड़ एटम बमों के धमाकों के साथ मानव जाति के विनाश की राह पर बढ़ेगी।

आज प्रायवेटकरण की लाख चर्चा हो पर हकीकत यह है कि अब दुनिया में प्रोडक्शन का महत्वपूर्ण हिस्सा सरकारी उद्यमों में हो रहा है। और कितना ही आड़ा-तिरछा हो कर यह क्यों न चले, प्रोडक्शन में सरकारी क्षेत्र का वजन बढ़ेगा ही। हर देश की अर्थव्यवस्था में सरकारी दबदबा बढ़ता जायेगा। इसलिये सामाजिक जीवन में सरकारी वर्करों का महत्व आने वाले दिनों में और बढ़ेगा। अतः क्रान्तिकारी मजदूर आन्दोलन की सफलता के लिए उसमें सरकारी क्षेत्र के मजदूरों का हिस्सा लेना बहुत जरूरी हो गया है। और फिर, सरकारी वर्करों के अपने हित माँग करते हैं कि वे पूंजीवादी रेत की दीवार पर टेक लगाने की बजाय क्रान्तिकारी मजदूर आन्दोलन में आगे बढ़ कर हिस्सा लें। वर्कशाप का हो चाहे फैक्ट्री का, प्रायवेट उद्यम का हो चाहे सरकारी का, हर मजदूर का फर्ज है कि वह क्रान्ति की राह को पहचानने और उस पर चलने की कोशिश करे।

—o—

अगर एकजुट हो जायें.........

आमतौर पर पूंजीवादी प्रचार मजदूरों से जुड़े आन्दोलनों की खबरें बहुत कम करके देता है—तोड़-मरोड़ तो वह करता ही है। दिक्कत यह भी है कि आज सचेत व संगठित क्रान्तिकारी आन्दोलन बहुत ही कमजोर है जिसकी वजह से पूंजीवादी नकाब व तोड़-मरोड़ से निपटना बहुत मुश्किल है। हमारी अपनी कमजोरी ऊपर से............... फिर भी, नजर डालिये मई 90 के कुछ समाचारों पर और सोचिये।

— दिल्ली के मायापुरी इन्डस्ट्रियल एरिया की एक फैक्ट्री में मजदूरों और मैनेजेमेन्ट के गुन्डों के बीच टकराव।

— गाजियाबाद के साहिबाबाद क्षेत्र की फैक्ट्रियों में मजदूरों के बढ़ते गुस्से से मैनेजमेन्टें चिन्तित।

— तमिलनाडु में सरकारी क्षेत्र की चार कपड़ा मिलों में हड़ताल।

— दक्षिण कोरिया में हड़तालों की लहर।

— निकारागुआ में 15 मई को हड़ताल से काम-काज ठप्प।

— महाराष्ट्र में औरंगाबाद जिले की फैक्ट्रियों में मजदूरों का गुस्सा भड़क रहा है। मजदूरों के खिलाफ और सख्ती के लिए मैनेजमेन्टों के प्रतिनिधियों की भूख हड़ताल।

— बिहार में हजारीबाग जिले की कोयला खदानों में मजदूरों का जुझारू संघर्ष।

— अर्जेन्टीना में सात लाख मजदूरों की 13 से 20 मई तक हड़ताल

— यूनान में दस लाख मजदूरों ने 22 मई को हड़ताल की।

— रोमानिया में दस हजार जहाजरानी और गोदी मजदूर हड़ताल पर

— पोलैंड में रेलवे मजदूरों की हड़ताल।

यह सही है कि क्रान्तिकारी विकल्प के अभाव में मजदूरों के असन्तोष को अक्सर पूंजीवादी गुट एक-दूसरे के खिलाफ इस्तेमाल करते हैं। इस प्रकार फर्जी हड़तालें भी एक हकीकत हैं लेकिन आज दुनिया-भर में मजदूरों का बढ़ता असन्तोष मुख्य बात है। और, जगह-जगह भड़क रहे मजदूरों के गुस्से को एकजुट करके मजदूरों व समाज के अन्य हिस्सों के दुख-दर्द की जननी इस पूंजीवादी व्यवस्था को हमलों का निशाना बनाने की जरूरत है। इसके लिये सचेत तौर पर क्रान्तिकारी मजदूर आन्दोलन को दुनिया-भर में पुनः संगठित करने की जरूरत है। तो आइये, मिल कर कम्युनिस्ट आन्दोलन की राह के रोड़ों को दूर करें

दुनियां-भर में मजदूरों का मुखर हो रहा असन्तोष अगर एकजुट हो जाये तो पूंजीवाद को अजायबघर की चीज बनाने में देर नहीं लगेगी।

—x—

स्वत्वाधिकारी व सम्पादक शेरसिंह द्वारा आटोपिन झुग्गी, फरीदाबाद से प्रकाशित व अलकनन्दा प्रिंटिंग प्रेस C-III/206, सं. गाँ. मेमो. न. से मुद्रित